सृष्टितत्त्व-प्रलयतत्त्व और पद्मपुराण

डॉ0 आनन्द कुमार

सृष्टिस्थित्यन्तकरणाद् ब्रह्माविष्णुशिवात्यकः।
स संज्ञा याति भगवानेक एवं जनार्दनः।।

- (पद्मपुराण 2/114)

भगवान जनार्दन स्वयं बह्मा (रजोगुणयुक्त) होकर संसार की सृष्टि में प्रवृत होते हैं और जबतक कल्प की स्थिति रहती है तब तक वे ही युग-युग में अवतार धारण कर सृष्टि की रक्षा करते हैं। कल्प की स्थिति में भगवान् सत्त्गुण धारण किये रहते हैं। कल्प के अन्त होने पर भगवान् तम् प्रधान रौद्र रूप धारण करके सम्पूर्ण प्राणियों का संहार करते हैं। सब भूतों का नाश करके भगवान् शेषनाग की शय्या पर शयन करते हैं। पुनः जागने पर वे भगवान ब्रह्मा का रूप धारण करके नये सिरे से संसार की सृष्टि करते हैं। सर्वप्रथम ब्रह्मा जी का प्रादुर्भाव अण्ड में हुआ। वह अण्ड जल से घिरा है, जल तेज से घिरा है, तेज वायु से घिरा है। वायु आकाश से और आकाश अहंकार से घिरा है। अहंकार को महतत्त्व ने तथा महत्त्व को प्रकृति ने घेर रखा है। उक्त अण्ड को ही सृष्टि की उत्पत्ति का आश्रय बताया गया है।[1] पद्मपुराण में सृष्टि-रचना के विषय में पुलस्त्यजी बताते हैं[2]-

सृष्टि के प्रारम्भ काल में जब जगत् के स्वामी ब्रह्माजी कमल के आसन से उठे तब सबसे पहले उन्होंने महतत्त्व को प्रकट किया, फिर महतत्त्व से वैकारिक (सात्विक), तैजस (राजस) तथा भूतादिरूप (तामस) तीन प्रकार के अहंकार उत्पन्न हुए, जो कमेन्द्रियों सहित पाँचों ज्ञानेन्द्रियों तथा पंचभूतों का कारण है। पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश ये पाँच भूत है। भूतादि नामक तामस अहंकार ने विकृत होकर शब्द तन्मात्रा को उत्पन्न किया। उससे शब्द गुणवालें आकाश का प्रादुर्भाव हुआ। भूतादि (तामस अहंकार) ने शब्द तन्मात्रा रूप आकाश को सब ओर से आच्छादित किया। तब शब्द तन्मात्रा रूप आकाश ने विकृत होकर स्पर्श तन्मात्रा की रचना की। उससे अत्यन्त बलवान् वायु का प्रादुर्भाव हुआ जिसका गुण स्पर्श माना गया है। तदन्तर आकाश से आच्छादित होने पर वायु तत्त्व में विकार आया। उससे रूप तन्मात्रों की सृष्टि हुई। वह वायु से अग्नि रूप में प्रकट हुई। रूप उसका गुण हुआ। फिर स्पर्श तन्मात्रा वाले वायु ने रूप तन्मात्रा वाले तेज को सब ओर से अच्छादित किया। इससे अग्नि तत्त्व विकृत होकर रस तन्मात्रा को उत्पन्न किया। उससे जल की उत्पत्ति हुई। जिसका गुण रस माना गया है। फिर रूप-तन्मात्रावाले तेज ने रस-तन्मात्रा रूप जल तत्त्व को सब ओर से अच्छादित किया। इससे विकृत होकर जलतत्त्व ने गन्ध तन्मात्रा की सृष्टि की जिससे ये पृथ्वी उत्पन्न हुई। पृथ्वी का गुण गन्ध माना गया है। इन्द्रियाँ तैजस कहलाती है क्योंकि वे राजस अहंकार से प्रकट हुई है। इन्द्रियों के अधिष्ठाता दस देवता वैकारिक कहे गये हैं क्योंकि उनकी उत्पत्ति सात्विक अहंकार से हुई है। इस प्रकार इन्द्रियों के अधिष्ठाता दस देवता और ग्यारहवाँ मन वैकारिक माने गये हैं। त्वचा, चक्षु, नासिका, जिह्वा और श्रोत्र ये पाँच इन्द्रियाँ शब्दादि विषयों का अनुभव कराने के साधन हैं। अतः इसे ज्ञानेन्द्रिय कहते हैं। गुदा, उपस्य, हाथ, पैर और वाक् ये क्रमशः उत्सर्जन, मैथुनजनित सुख, शिल्प निर्माण (हस्तकौशल), गमन और शब्दोच्चरण इन कर्मो में सहायक है। अतः ये कमेन्द्रिय हैं।

आकाश, वायु, तेज, जल और पृथ्वी ये क्रमशः शब्दादि उतरोत्तर गुणों से युक्त है अर्थात् आकाश का

अतिथि सहायक प्राध्यापक,बी.आर.ए.बी.यू.,मुजफ्फरपुर।

गुण शब्द, वायु के गुण शब्द और स्पर्श, तेज के गुण शब्द, स्पर्श और रूप, जल के शब्द, स्पर्श, रूप और रस, पृथ्वी के शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्धा ये सभी गुण है। उक्त पाँचों भूत शान्त, घोर और मूढ़ हैं अर्थात् सुख-दुख और मोह से युक्त हैं। ये पाँचों भूत अलग-अलग रहने पर भिन्न-भिन्न प्रकार की शक्तियों से सम्पन्न है। अतः परस्पर संगठित हुए बिना, पूर्णतया मिले बिना ये प्रजा की सृष्टि करने में समर्थ न हो सकें, इसलिए परमपुरूष परमात्मां ने संकल्प द्वारा इसमें प्रवेश किया। फिर महतत्त्व से लेकर विषयपर्यन्त सभी तत्त्व पुरूष द्वारा अधिष्ठित होने के कारण एकत्व को प्राप्त हुए। इस प्रकार एक दूसरे का आश्रय लेकर उन्होंने अण्ड की उत्पत्ति की। इस अण्ड में ही पर्वत, द्विप आदि सहित समुद्र ग्रहों और तारों सहित सम्पूर्ण लोक तथा देवता, असुर और मनुष्यों सहित समस्त प्राणी उत्पन्न हुए। वह अण्ड पूर्व की अपेक्षा दस गुणे अधिक जल, अग्नि, वायु, आकाश और भूतादि अर्थात् तामस अहंकार से आवृत है। भगवान् विष्णु स्वयं ब्रह्मा होकर संसार की सृष्टि में प्रवृत होते हैं तथा जबतक कल्प की स्थिति बनी रहती है तबतक वे ही युग-युग में अवतार धारण कर सृष्टि की रक्षा करते हैं। वे विष्णु सत्वगुण धारण किये रहते हैं। कल्प के अन्त होने पर विष्णु तम प्रधान रौद्र रूप धारण करके सम्पूर्ण प्राणियों का संहार करते हैं। सब भूतों का नाश करके संसार को जल में निमग्न करके वे सर्वरूपधारी भगवान् स्वयं शेषनाग की शय्या पर शयन करते हैं। फिर जागने पर वे ब्रह्मा का रूप धारण करके नये सिरे से संसार की सृष्टि करते हैं। इस तरह एक ही भगवान् जनार्दन सृष्टि, पालन और संहार करने के कारण ब्रह्मा, विष्णु और शिव नाम धारण करते हैं।[3]

प्रभु स्वयं स्रष्टा होकर अपनी ही सृष्टि करते हैं, पालक होकर पालनीय रूप से अपना ही पालन करते हैं और संहारकारी होकर स्वयं अपना ही संहार करते हैं। पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश सब वे ही हैं, क्योंकि अविनाशी विष्णु ही सब भूतों के ईश्वर और विश्व रूप हैं।

ब्रह्माजी एवं उनके रचे हुए सर्ग

ब्रह्माजी सर्वज्ञ एवं साक्षात् नारायण स्वरूप हैं। वे उपचार से आरोप द्वारा ही 'उत्पन्न हुए' कहलाते हैं। वास्तव में वे नित्य हैं, अपनी निजी मान से उनकी आयु सौ वर्ष की मानी गयी है। ब्रह्माजी की आयु 'पर' कहलाती है। उसके आधे भाग को परार्ध कहते हैं। मानव वर्षों से गणना करने पर मन्वन्तर का कालमान पूरे तीस करोड़ सरसठ लाख बीस हजार वर्ष होता है। इस काल को चौदह से गुणा करने पर ब्रह्मा के एक दिन का मान होता है। उसके अन्त में नैमित्तिक नामवाला ब्रह्मा-प्रलय होता है। उसक समय भूलोक भुवलोक और स्वर्गलोक सम्पूर्ण त्रिलोकी दग्धा होने लगती हैं। महलोक में निवास करने वाले पुरूष आंच से सन्तप्त होकर जनलोक में चले जाते हैं। दिन के बराबर अपनी रात बीत जाने पर ब्रह्माजी पुनः संसार की सृष्टि करते हैं। इस प्रकार पक्ष, मास आदि के क्रम से धीरे-धीरे ब्रह्माजी का एक वर्ष व्यतीत होता है। इसी क्रम से ब्रह्माजी का 100 वर्ष पूरा होता है।

पिछले कल्प के अन्त होने पर रात्रि में सोकर उठने पर ब्रह्माजी ने देखा की सम्पूर्ण लोक सूना हो रहा है। पृथ्वी एकार्णव के जल में डुब गयी, तब वे पृथ्वी को निकालने की इच्छा से जल में प्रविष्ट हुए। वहाँ पृथ्वी ने ब्रह्माजी की स्तुति की। फिर ब्रह्मा जी पृथ्वी को ले रसातल से ऊपर उठे और पृथ्वी को उन्होंने महासागर के जल पर स्थापित कर दिया। फिर उन्होंने पृथ्वी का विभाग कर सात द्वीपों का निर्माण किया तथा भूर्लोक, भूवर्लोक, स्वर्लोक और महर्लोक की पूर्ववत् कल्पना की। फिर ब्रह्माजी भगवान से कहते हैं कि मैंने जिन-जिन असुरों को वरदान दिया, उसे देवताओं की भलाई के लिए मार डालें एवं जो सृष्टि रचूँगा उसका पालन करें। इस पर भगवान् तथास्तु कहते हैं और ब्रह्माजी देवता आदि प्राणियों की सृष्टि करते हैं -

1. **प्रथम सृष्टिः**- ब्रह्मा की प्रथम सृष्टि महतत्त्व की

उत्पत्ति माना गया है।

2. दूसरी सृष्टि - तन्मात्र का अर्विभाव दूसरी सृष्टि है, इसे भूतसर्ग भी कहते हैं।
3. तीसरी सृष्टि (ऐन्द्रिय सर्ग) - इसमें वैकारिक अर्थात् सात्विक अहंकार से इन्द्रियाँ उत्पन्न होती है। यह प्राकृत सर्ग है जो अवुद्धि पूर्वक उत्पन्न होती है।
4. चौथी सृष्टि (मुख्य सर्ग) - इसमें पर्वत और वृक्ष जैसे स्थावर वस्तुओं की उत्पत्ति हुई।
5. पाँचवीं सृष्टि (तिर्यक स्रोत्) - इसके अन्तर्गत पशु-पक्षी, कीट-पतंग की उत्पत्ति हुई।
6. छठी सृष्टि (देवसर्ग) - इसमें ऊर्ध्वरेता देवताओं की सृष्टि हुई।
7. सातवीं सृष्टि (अवाक् स्रोत) - इसमें मानव की सृष्टि हुई।
8. आठवीं सृष्टि (अनुग्रह सर्ग) - यह सात्विक तामसिक सर्ग है।

इन आठों सर्ग में प्रथम तीन सर्ग प्राकृत सर्ग है और अंतिम पाँच सर्ग वैकृत सर्ग है, नौवा सर्ग कौमार सर्ग है, जो प्राकृत एवं वैकृत भी है। सम्पूर्ण जीव अपने पूर्वकृत शुभाशुभ कर्मो से प्रभावित रहता है। अतः प्रलय काल में संहार होने पर भी कर्मों के संस्कार बना रहता है।

जब ब्रह्माजी सृष्टिकार्य में प्रवृत्त हुए तो उस समय उनसे देवता सहित स्थावर पर्यन्त चार प्रकार की प्रजा उत्पन्न हुई। चारों प्रजा ब्रह्माजी के मानसिक संकल्प से उत्पन्न हुए। अतः वे मानसी कहलाये। फिर प्रजापति ने देवता, असुर, पितर और मनुष्य इन चार प्रकार के प्राणियों की तथा जल की भी सृष्टि करने की इच्छा से अपने शरीर का प्रयोग किया।

मुक्तात्मा प्रजापति की जंघा से दुरात्मा असुरों की उत्पत्ति हुई। ब्रह्मा ने अपनी वयस् (आयु) से इच्छानुसार वयों को उत्पन्न किया। ब्रह्माजी ने भुजाओं से भेड़ों, मुख से बकरों, पेट से गायों और भैसों का, पैरों से घोड़ें, हाथी, गदहें, नीलगाय, हरिन, ऊँट, खंचर एवं अन्य पशुओं की सृष्टि की। ब्रह्माजी के रोमावलियों से फल, मूस तथा अन्य अन्नों का प्रादुर्भाव हुआ। प्रजापति ने अपने पूर्ववर्ती मुख से गायत्री छन्द, ऋग्वेद, त्रिवृतस्तोम, स्थन्तर तथा अग्निस्टोम यज्ञ को प्रकट किया। दक्षिण वाले मुख से सामवेद, जगतीछन्द, सप्तदशस्तोम, वैरूप और अतिरात्रभाग की सृष्टि हुई। उतरवर्ती मुख से एकविशस्तोम, अर्थववेद, आप्तोर्याम, अनुष्टुप छन्द और वैराज को उत्पन्न किया।

छोटे-बड़े सभी प्राणि प्रजापति के विभिन्न अंगों से उत्पन्न हुए। कल्प के आदि में प्रजा ब्रह्मा ने देवताओं, असुरों, पितरों और मनुष्यों की सृष्टि करके फिर यक्ष, राक्षस, सिंह, पक्षी, मृग और सर्पों को उत्पन्न किया। नित्य अनित्य जितना भी यह चराचर जगत है उसे ब्रह्मा ने उत्पन्न किया। उन उत्पन्न हुए प्राणियों में से जिन्होंने पूर्व जन्म में जैसे कर्म किये हैं वे बार-बार जन्म लेकर वैसे ही कर्मों में प्रवृत होते हैं। सृष्टि के आरम्भ में सारे पदार्थ पूर्व कल्प के अनुसार ही दृष्टिगोचर होते हैं। सृष्टि के लिए इच्छुक और सृष्टि की शक्ति से युक्त ब्रह्माजी कल्प के आदि में बारम्बार ऐसी ही सृष्टि किया करते हैं।

मनुष्यों की सृष्टि-सृष्टि की इच्छा रखनेवाले ब्रह्माजी ने ब्रह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र इन चार वर्णों को उत्पन्न किया। इनमें ब्रह्मण मुख से, क्षत्रिय वक्ष-स्थल से, वैश्य जांघों से और शुद्र ब्रह्माजी के पैरों से उत्पन्न हुए। ये चारों वर्ण यज्ञ के उत्तम साधन हैं। अतः ब्रह्माजी यज्ञानुष्ठान की सिद्धि के लिए इन चारों वर्णों की सृष्टि की। यज्ञ से तृप्त होकर देवता लोग जल की वृष्टि करते हैं, जिससे मनुष्यों की तृप्ती होती है। ब्रह्माजी पहले मन के संकल्प से चराचर प्राणियों की सृष्टि की, किन्तु जब इस प्रकार उनकी सारी प्रजा अधिक न बढ़ सकी, तब वे अपने ही सदृश अन्य मानस पुत्रों को उत्पन्न किया, जिनका नाम है- भृगु, पुलह, कृतु, अंगिरा, मरीचि, दक्ष, अत्रि, वशिष्ठ और पुलस्त्यजी। इन भृगु आदि के पहले जिन

सनन्दन आदि पुत्रों को ब्रह्माजी ने जन्म दिया उनके मन में पुत्र उत्पन्न करने की इच्छा नहीं हुई जिससे वे सृष्टि की रचना कार्य में नहीं फँसे। वे सभी विज्ञान को प्राप्त थे तथा मात्सर्य दोषों से रहित और वितराग थे। संसार की सृष्टि कार्य में उनके उदासीन हो जाने पर ब्रह्माजी को बहुत क्रोध हुआ, जिससे उनके ललाट पर सूर्य के समान तेजस्वी रूप (रूद्र) प्रकट हुआ जिनका आधा शरीर स्त्री तथा आधा शरीर पुरूष का था। ब्रह्माजी उन्हें अपने शरीर का दो भाग करने का आदेश दिया। उनके कहने पर रूद्र ने अपने शरीर के स्त्री तथा पुरूष रूप दोनों भागों को अलग-अलग किया। फिर पुरूष भाग को ग्यारह रूपों में तथा स्त्री भाग को अनेक रूपों में विभक्त किया। फिर ब्रह्माजी अपने से उत्पन्न अपने ही स्वरूपभूत स्वायम्भुव को प्रजा पालन के लिए प्रथम मनु बनाया। स्वायम्भुव मनु से शतरूपा को पत्नी बनाया फिर उनसे आगे पीढ़ी चला।

देवी शतरूपा स्वायम्भुव मनु से दो पुत्र तथा दो पुत्री को जन्म दिया। पुत्रों के नाम प्रियव्रत और उत्तानपाद् तथा पुत्री के नाम प्रसूति और आकृति था। मनु ने प्रसूति का विवाह दक्ष के साथ और आकृति का रूचि प्रजापति के साथ किया। दक्ष प्रसूति के गर्भ से चौबीस कन्याऐं उत्पन्न की। श्रद्धा, लक्ष्मी, धृति, पुष्टि, तुष्टि, मेधा, क्रिया, बुद्धि, लज्जा, वपु, शान्ति, सिद्धि, कीर्ति इन तेरह कन्याओं को भगवान् धर्म ने पत्नी के रूप में ग्रहण किया। शेष ग्यारह कन्याऐं ख्याति, सती, सम्भूति, स्मृति, प्रीति, क्षमा, सुमति, अनसूया, ऊर्जा, स्वाहा, स्वधा को क्रमशः भृगु, शिव, मरीचि, अंगिरा, मैने (पुलस्त्य), पुलह, क्रतु, अत्रि, वशिष्ठ, अग्नि तथा पितरों ने ग्रहण किया। श्रद्धा ने काम को, लक्ष्मी ने दर्प को, धृति ने नियम को, बुद्धि ने बोध को, लज्जा ने विनय को, वपु ने व्यवसाय को, शान्ति ने क्षमा को, सिद्धि ने सुख को और कीर्ति ने यश को उत्पन्न किया। ये धर्म के पुत्र हैं। काम से उसकी पत्नी नन्दी ने हर्ष नामक पुत्र को जन्म दिया। भृगु की पत्नी ख्याति ने लक्ष्मी को जन्म दिया, जो नारायण की पत्नी हैं।

अधर्म की स्त्री का नाम हिंसा है। उससे अनृत नामक पुत्र और निकृत नामक कन्या की उत्पत्ति हुई। फिर उन दोनों ने भय और नरक नामक पुत्र और माया और वेदना नाम की कन्याओं को उत्पन्न किया। माया भय की एवं वेदना नरक की पत्नी हुई। माया से संहार करने वाला मृत्यु नामक पुत्र को जन्म दिया। वेदना से दुःख की उत्पत्ति हुई। मृत्यु से जटा, शोक तृष्णा, क्रोध का जन्म हुआ। ये सभी अधर्मस्वरूप है। ये ब्रह्माजी के रौद्र रूप है और संसार के प्रलय में कारण होते हैं।

ब्रह्मपुराण में संसार के रचनाकार ब्रह्माजी को बताया गया है। जबकि पद्मपुराण में संसार की सृष्टिकर्त्ता विष्णु को बताया गया है। मुल में ब्रह्मा और विष्णु एक ही शक्ति है। पद्मपुराण चूँकि विष्णु को ज्यादा महत्त्व देती है, इसलिए पद्मपुराण में संसार की सृष्टिकर्त्ता विष्णु को बतायी है।

अन्य पुरणों की दृष्टि में सृष्टितत्त्व का विश्लेषण

पुराण में सृष्टि तत्व का वर्णन बड़े विस्तार से किया गया है। सर्ग (सृष्टि) पुराणों के पंचलक्षणों में से मुख्य लक्षण है। पुराण में सृष्टि के नौ प्रकार (सर्ग) बतलाये गये हैं। इन नौ सर्गों में मुख्य रूप से तीन प्रकार के सर्ग होते हैं - (1) प्राकृत सर्ग, (2) वैकृत सर्ग, (3) प्राकृत-वैकृत सर्ग।

1. **प्राकृत सर्गः**- यह सर्ग अबुद्धि पूर्वक होता है अर्थात् उसकी सृष्टि नैसर्गिक रूप में होती है और उसके निमित्त ब्रह्मा को अपनी बुद्धि या विचार को कार्य रूप में लाने की आवश्यकता नहीं होती।
2. **वैकृत सर्ग** - वैकृत सर्ग बुद्धि पूर्वक होता है।
3. **प्राकृत-वैकृत सर्गः**-प्राकृत-वैकृत उभयात्मक होता है।

प्राकृत सर्ग की संख्या तीन होती है। वैकृत सर्ग की संख्या पाँच होती है। प्राकृत-वैकृत सर्ग की संख्या एक होती है।

''प्राकृताश्च त्रये पूर्वे सर्गास्तेऽबुद्धिपूर्वकाः।
बुद्धिपूर्व प्रवर्तन्ते मुख्याद्याः पंच वैकृताः।।''

(शिवपुरण, वायवीय 1/12/18)

प्राकृत सर्गः

1. **ब्रह्म सर्ग**- महतत्त्व के सर्ग को ब्रह्मा का प्रथम सर्ग कहते हैं। ब्रह्मसर्ग में ब्रह्मन् शब्द गीता के अनुसार महत् ब्रह्म अर्थात् बुद्धि तत्त्व का बोधक है। सांख्य दर्शन के अनुसार बुद्धि या महतत्त्व ही कृति-पुरूष के संयोग प्रथम परिणाम है। यही मत पुराण में भी मान्य है।
2. **भूत सर्ग**- पंचतन्मात्राओं की सृष्टि का यह अभिधन है। तन्मात्राएँ पृथिव्यादि पंचभूतों की अत्यन्त सूक्ष्मावस्था के द्योतक तत्त्व हैं।
3. **वैकारिक सर्ग**- यह इन्द्रिय सम्बन्धी सर्ग है। अहंकार के तामस रूप से पंचतन्मात्राओं का जन्म होता है, सात्विक रूप से इन्द्रियों का जन्म होता है। राजसरूप दोनों की सृष्टि में समान भाव से क्रियाशील रहता है। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ तथा मन को मिलाकर ग्यारह इन्द्रियाँ है।

वैकृत सर्ग (पाँच है) -

4. **मुख्य सर्ग** - विष्णुपुराण (1/5/3-4) के अनुसार सर्ग के आदि में ब्रह्माजी के पूर्ववत् सृष्टि का चिन्तन करने पर पंचवर्ण अविद्या के रूप में अबुद्धि पूर्वक तमोगुणी सृष्टि का आविर्भाव हुआ। तम (अज्ञान), मोह, महामोह (भोगेच्छा), तामिस्र (क्रोध) तथा अन्धतामिस्र (अभिनिवेश) - ये अविद्या के पंचपर्व है। पुनः ब्रह्माजी ध्यानकर सृष्टि की जो ज्ञानशून्य, भीतर-बाहर से तमोमय तथा जडनगादि (वृक्ष, गुल्म, लता, तृण,वीरूधा) रूप पाँच प्रकार के जड़ पदार्थों की थी।
5. **तिर्यक सर्ग** - ब्रह्मा ने पुनः ध्यान किया तब तिर्यग्योनी के जीवों का उदय हुआ। तिर्यक नाम का स्वारस्य यही है कि इस योनि के प्राणी वायु के समान तिरछी गति से चलती है। इस सर्ग में पशु, पक्षी आते हैं। ये प्राणी तमोमय (अज्ञानी) विवेकरहित अनुचित मार्ग का अवलम्बन करनेवाला है। ये अहंकारी, अभिमानी, अट्ठाईस प्रकार के o/ kं से युक्त, अन्तप्रकाश तथा परस्पर एक दूसरे को प्रवृति को न जाननेवाला होता है।
6. **देवसर्गः**- यह ऊधर्व लोक में निवास करनेवाला सात्विक सर्ग है। इस सृष्टि का प्राणि विषय सुख की प्रीति से सम्पन्न होते हैं, ब्राह्य-आन्तर दृष्टि से युक्त होते हैं। इसकी सृष्टि ब्रह्माजी ने की।
7. **मानुष सर्गः**- ब्रह्माजी ने ध्यान कर प्राणियों की सृष्टि की जो पृथ्वी पर भ्रमण करनेवाला जीव था। इसमें सत्त्व रज और तम गुणों का आधिक्य रहता है। वे दुखबहुल होते हैं (तमोद्रेकात्)। ये अत्यन्त क्रियाशील है, सदा कार्य में संलग्न रहते हैं (रजोद्रेकात्)। वाह्य अम्यन्तर ज्ञान से सम्पन्न होते हैं (सत्वोद्रेकात्)। इस सर्ग के प्राणी मनुष्य कहलाते हैं ।

(विष्णु 1/5/15-18)।

8 **अनुग्रह सर्गः**- इसके स्वरूप का निर्देश मार्कण्डेय पुराण में है -

पंचमोऽनुग्रहः सर्गश्चतुर्धा स व्यवस्थितः।
विपर्ययेण शक्त्या च तुष्ट्या सिद्धया तथैव च।।

-(मार्कण्डेय पुराण 47/28)

यहाँ यह चार प्रकार का बतलाया गया है - विपर्यम, सिद्धि, शान्ति तथा तुष्टि। वायुपुराण (6/67-68) में इन चारों की व्यवस्था है- स्थावरों में विपर्यास, तिर्यग्योनि में शक्ति, मनुष्यों में सिद्धि तथा देवों में तुष्टि।

प्राकृत-वैकृत सर्ग (एक) -

9. **कौमार सर्ग** : यह अन्तिम सर्ग उभयात्मक सर्ग है। भागवतपुराण (1/3/6) में कौमार सर्ग का प्रयोग सनत्कुमार के रूप में किया गया है-

स एव प्रथमं देवः कौमारं सर्गमास्थितः।
चचार दुश्ररं ब्रह्म चर्यमखण्डितम्।।

यह कथन इसका प्रमाण है कि कुमारों की सृष्टि भगवत्ध्यानजन्य तथा भगवज्जन्य है इसलिए वे प्राकृत-वैकृत कहे गये हैं।

संसार में नाना प्रकार के प्राणियों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में भी पुराणों में वर्णन है -

सृष्टि की कामना करने पर जब ब्रह्माजी दत्तचित्त हुए तब उनमें तमोगुण का आधिक्य हुआ। उस समय ब्रह्माजी के जंघा से सर्वप्रथम असुर उत्पन्न हुए। असुर के उत्पत्ति के बाद ब्रह्माजी उस तामसिक देह का परित्याग कर दिया, जो रात्रि के रूप में परिणत हो गया। फिर सात्त्विक देह का आश्रय करने पर ब्रह्माजी के मुख से सत्त्वप्रधान सुरों की उत्पत्ति हुई। उसके बाद ब्रह्माजी वह शरीर त्याग दिया। जिससे वह शरीर दिन के रूप में परिणत हो गया। फिर ब्रह्माजी आंशिक सत्त्वमय देह को धारण किया और अपने पार्श्व से पित्तरों का निर्माण किया। वह छोड़ा गया शरीर दिन और रात के बीच सन्धया बन गया। फिर ब्रह्माजी रजोमय देह का आश्रय किया जिससे मनुष्य की सृष्टि हुई। उसके बाद ब्रह्माजी द्वारा छोड़ा गया शरीर ज्योत्सना बन गया। इस प्रकार असुर का सम्बन्ध प्रभातकाल से है।

इन जीवों का वैशिष्टय है कि प्राक् कल्प में उनका जैसा स्वभाव था, जैसी प्रवृति थी इस सृष्टि में उन्हें वैसा ही स्वभाव वैसी ही प्रवृति प्राप्त होती है। हिंसा-अहिंसा, मृदुता-कठोरता, धर्म-अधर्म, सत्य-असत्य ये सब अपनी पूर्व भावना के अनुसार ही उन्हें प्राप्त होती है तथा उन जीवों को पूर्व भावना के अनुसार ही ये सब अच्छे लगते हैं। विष्णुपुराण में ऐसा वर्णन आया है -

तेषां ये यानि कर्माणि प्राकसृष्टयां प्रतिपेदिरे।
तान्येव ते प्रपद्यन्ते सृज्यमानाः पुनः पुनः।।
हिंस्त्राहिस्त्रे मृदु-क्रूरे धर्माधर्मा वृतानृते।
तद्राविताः प्रपद्यन्ते तस्माततत्तस्य रोचते।।

(विष्णुपुराण 1/5/60-61)

पद्मपुराण में प्रलय तत्त्वः

पद्मपुराण के अनुसार परम सत्ता भगवान विष्णु की ब्रह्मा होकर संसार की सृष्टि में प्रवृत होते हैं, जबतक कल्प की स्थिति रहती है तबतक वे भगवान विष्णु ही युग-युग में अवतार धारण कर समुची सृष्टि की रक्षा करते हैं, फिर कल्प का अन्त होने पर वे ही अपना तमः प्रधान रूद्र रूप प्रकट करते हैं और अत्यन्त भयानक आकार धारण करके सम्पूर्ण प्राणियों का संहार करते हैं। इस प्रकार सब भूतों का नाश करके संसार को एकार्वण के जल में निमग्न करके वे सर्वरूपधारी भगवान स्वयं शेषनाग की शय्या पर शयन करते हैं। पुनः जागने पर ब्रह्मा का रूप धारण करके वे नये सिरे से संसार की सृष्टि करने लगते हैं। इस प्रकार एक ही भगवान जनार्दन सृष्टि, पालन तथा संहार करने के कारण ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव नाम धारण करते हैं।

सृष्टिस्थित्यन्तकरणाद् ब्रह्मविष्णु शिवात्मकः।
स संज्ञा याति भगवानेक एव जनार्दनः।।

(पद्मपुराण सृष्टि 2/114)

पद्मपुराण में भगवान श्रीकृष्ण का वचन है - सूर्य, शिव, गणेश, विष्णु और शक्ति के उपासक सभी मुझको ही प्राप्त होते हैं। जैसे वर्षा का जल सब ओर से समुद्र में ही जाता है वैसे ही पाँचों रूपों के उपासक मेरे पास ही आते हैं। वस्तुतः मैं एक ही हूँ। लीला के अनुसार विभिन्न नाम धारण करके पाँच रूपों में प्रकट हूँ। जैसे एक ही देवदत्त नामक व्यक्ति पुत्र-पिता आदि अनेक नामों से पुकारा जाता है वैसे ही मुझे भिन्न-भिन्न नामों से लोग पुकारते हैं।[5]

इस प्रकार भगवान विष्णु स्वयं ही ब्रह्मा होकर संसार की सृष्टि में प्रवृत होते हैं तथा जबतक कल्प की स्थिति रहती है तबतक वे ही युग-युग में अवतार धारण कर समूची सृष्टि की रक्षा करते हैं। कल्प का अन्त होने पर अपना तमः प्रधान रौद्र रूप प्रकट करते हैं और अत्यंत भयानक आकार धारण करके सम्पूर्ण प्राणियों का संहार करते हैं।[6] इस तरह प्रलय होता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूचीः

1. पद्मपुराण (गी0प0)
2. पद्मपुराण (गी0प0)
3. पद्मपुराण (2/114)
4. सांख्यकारिका (कारिका 49-51)
5. पद्मपुराणउत्तर (90/63-64)
6. पद्मपुराण सृष्टिखण्ड